BA-I Date 25/4/20 Page-1
Paper-I
Unite-5

Dr. Raj Gopal
Assistant Professor (G/PT)
Department of Philosophy.
V.S.J College Rajnagar.
Madhubani (L.N.M.U Darbhanga)
Mail ID:- rajgopal7755@gmail.com.

Jainism: Bondage and Liberation (Lecture-II)
जैन दर्शन बन्धन और मोक्ष (व्याख्यान-II)

पिछले व्याख्यान में मैंने बतलाया था कि जैन दर्शन के अनुसार जन्म ग्रहण करना, जीव का शरीर से संबंध स्थापित करना बन्धन है। शरीर का निर्माण पुद्गल कणों से हुआ है। इस प्रकार से जीव का कर्मपुद्गलों से संयोग ही बन्धन का मूल कारण है। स्वाभाविक रूप से जीव पूर्ण एवं मुक्त है। इसमें चार प्रकार की पूर्णताएं पायी जाती हैं। ये हैं- अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य एवं अनन्त आनन्द। जीव के ये स्वाभाविक गुण केवल मुक्त जीवों में दृष्टिगत हैं।

जैन दर्शन अन्य भारतीय दर्शनों की तरह मोक्ष को जीवन का चरम लक्ष्य मानता है। जैन दर्शन में मोक्ष जीव का कर्मपुद्गलों से सम्बन्ध विच्छेद की अवस्था है। जीव का कर्मपुद्गलों से संयोग होना बन्धन है। अतः जीव का कर्मपुद्गलों से वियोग या छुटकारा पाना ही मोक्ष है। कर्म पुद्गलों से जीव का वियोग होने के लिए दो बातें आवश्यक हैं- नये कर्मपुद्गल कणों का जीव की ओर आस्रव बन्द हो जाये तथा जीव में प्रविष्ट पुराने कर्मपुद्गलों का विनाश हो जाये। नये कर्मपुद्गल कणों का जीव की ओर प्रवाह को रोकना ही संवर है। संवर दो प्रकार का होता है- भाव संवर एवं द्रव्य संवर।

Scanned with CamScanner

भाव संवर द्रव्य संवर की पहले की अवस्था है इसमे भावात्मक समाप्त होता है। अर्थात जीव के राग-द्वेष मोह आदि विकारों का निरुद्ध होता है। द्रव्य संवर मे जीवात्मा में नये कर्मपुद्गलों का प्रवेश निरुद्ध होता है। इस प्रकार से संवर की अवस्था में जीव राग-द्वेष आदि विकारों तथा उसमें नये कर्मपुद्गलों का प्रवेश तथा उससे होने वाला बन्धन रुक जाता है।

आत्मा मे पहले से प्रविष्ट कर्मपुद्गलों का निरोध संवर से नहीं होता है। इसके लिए निर्जरा की आवश्यकता है। जैन दर्शन मे पहले से प्रविष्ट कर्मपुद्गलों का विनाश निर्जरा है। जैन दर्शन में निर्जरा के दो भेद हैं। भाव निर्जरा एवं द्रव्य निर्जरा। साधक मे भाव निर्जरा मे कर्मों की नाश करने की भावना होती है। द्रव्य निर्जरा में आत्मा में प्रविष्ट कर्मपुद्गलों का वास्तविक नाश होता है। जैन दर्शन में मोक्ष के लिए कठोर साधना पर बल दिया गया है। इसमें दर्शन ज्ञान एवं चरित्र के अभ्यास से जीवात्मा मे प्रविष्ट कर्म पुद्गलों का विनाश होता है। जब कर्मपुद्गलों का अंतिम कण भी जीवात्मा से पृथक हो जाता है तब जीव अपनी स्वाभाविक पूर्णता को प्राप्त करता है। यही मोक्ष की अवस्था है। इस प्रकार से जीव के सभी कर्मों का क्षय मोक्ष है।

जैन दर्शन में सम्यक् ज्ञान सम्यक् चरित्र, सम्यक् दर्शन मोक्ष के मार्ग हैं, "सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित्राणि मोक्षमार्गः"। जैन दर्शन में इन्हें त्रिरत्न कहा जाता है। जैन दर्शन में कर्म बन्धन का कारण है। कर्म का कारण अज्ञान या अविद्या है। जीव अज्ञान के कारण ही अपने स्वाभाविक स्वरूप को भूलकर कषायों से चिपका रहता है। मोक्ष की प्राप्ति हेतु अज्ञान का विनाश आवश्यक है। अज्ञान के विनाश के लिए वास्तविक ज्ञान आवश्यक है। वास्तविक ज्ञान के लिए जैन तीर्थंकरों एवं उनके उपदेशों मे श्रद्धा (सम्यक् दर्शन)

रखना अपेक्षित है। केवल वास्तविक ज्ञान से ही मोक्ष प्राप्त नहीं होता है उसके अनुसार आचरण और जीवन यापन भी आवश्यक है। इस प्रकार से जैन दर्शन में मोक्ष प्राप्ति के लिए सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, और सम्यक् चरित्र अपरिहार्य साधन हैं।

(i) सम्यक् दर्शन ⇒ जैन दर्शन, धर्म एवं उनके तीर्थंकरों के उपदेशों में दृढ़ विश्वास रखना ही सम्यक् दर्शन है। जैन दार्शनिक मणिभद्र के अनुसार मेरा महावीर या कपिल के प्रति कोई पक्षपात या द्वेष नहीं है मैं केवल तार्किक वचन को ही स्वीकार करता हूँ, चाहे वह किसी का हो। इस प्रकार से जैन दर्शन में सम्यक् दर्शन बौद्धिक श्रद्धा है जो सम्यक ज्ञान के लिए आवश्यक है।

(ii) सम्यक ज्ञान ⇒ जैन धर्म एवं दर्शन के सिद्धान्तों का ज्ञान सम्यक् ज्ञान है। इसमें जीव और अजीव के मूल तत्वों का पूर्ण ज्ञान होता है। ज्ञानावरणीय कर्मों के विनाश से सम्यक् ज्ञान प्राप्त होता है।

(iii) सम्यक् चरित्र :- सम्यक ज्ञान को कर्म में परिणत करना सम्यक् चरित्र है। अहितकारी कर्मों का त्याग हितकारी कर्मों का आचरण सम्यक् चरित्र है। जैन दर्शन अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह इन पाँच व्रतों के पालन का उपदेश देता है।

(i) अहिंसा :- अहिंसा का शाब्दिक अर्थ है मन, वचन और कर्म तीनों से होने वाली हिंसा का त्याग करना। जैन दर्शन में अहिंसा का तात्पर्य केवल दूसरे को हानि पहुँचाने से बचना ही नहीं है बल्कि जो व्यक्ति दूसरों का उपकार करने में समर्थ है और वह ऐसा नहीं करता है तो भी वह हिंसा का पात्र है। जैन दर्शन अहिंसा को

Scanned with CamScanner

को काफी कठोरता पूर्वक पालन किया है।

(ii) सत्य :- इसका अर्थ है असत्य वचन का त्याग। इसके लिए हितकारी एवं प्रिय वचन बोलना। भय, लोभ एवं परनिन्दा की भावना से दूर रहते पार्थिक प्रकार का आचरण अपना कर सकते हैं।

(iii) अस्तेय :- चोरवृत्ति का त्याग अस्तेय है। बिना दिये पर द्रव्य ग्रहण करना अस्तेय है। जैन दर्शन व्यक्ति के जीवन के साथ-साथ उसकी संपत्ति को भी पवित्र मानता है। वे इसे व्यक्ति का बाह्य जीवन कहते हैं। अतः मानव को निर्देश करते हैं कि परद्रव्य को ग्रहण न करें।

(iv) ब्रह्मचर्य :- जैन दर्शन वासनाओं के परित्याग को ब्रह्मचर्य कहते हैं। इसमें केवल इन्द्रिय सुख का परित्याग नहीं बल्कि सभी कामनाओं का परित्याग है।

(v) अपरिग्रह :- विषयासक्ति का परित्याग अपरिग्रह है। जैन दर्शन के अनुसार व्यक्ति को शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध, इन विषयों का परित्याग करना चाहिए है। यहाँ सन्यासियों के लिए पूर्ण अपरिग्रह की बात है वहीं गृहस्थ के लिए सन्तोष की अपेक्षा है।

जैन दर्शन के अनुसार जीव सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, और सम्यक् चरित्र का अनुसरण करते हुए समस्त कर्म बाधाओं को दूर करके मोक्ष प्राप्त करते हैं। जैन दर्शन द्वारा बतलायी गयी साधना बहुत कठोर है। इसकी कठोरता के कारण ही यह जनसामान्य का धर्म नहीं बन सका। इसके द्वारा महाव्रत एवं अणुव्रत का पालन क्रमशः सन्यासियों एवं गृहस्थों के लिए अपेक्षाकृत दूसरे धर्मों से काफी कठोर है। यह अपनी कठोरता के कारण ही भारत में विलुप्त हो गया। थोड़े से मुनियों का धर्म बनकर रह गया। यद्यपि इसके द्वारा ज्ञान के अनुरूप आचरण पर बल देना प्रशंसनीय है।